दुआ - 1

जब आप दुआ मांगते तो उसकी इब्तिदा ख़ुदाए बुज़ुर्ग व बरतर की हम्द व सताइश से फ़रमाते, चुनांचे इस सिलसिले में फ़रमाया-

बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम

सब तारीफ़ उस अल्लाह के लिये है जो ऐसा अव्वल है जिसके पहले कोई अव्वल न था और ऐसा आख़िर है जिसके बाद कोई आख़िर न होगा। वह ख़ुदा जिसके देखने से देखने वालों की आंखें आजिज़ और जिसकी तौसीफ़ व सना से वसफ़ बयान करने वालों की अक़्लें क़ासिर हैं। उसने कायनात को अपनी क़ुदरत से पैदा किया, और अपने मन्शाए अज़मी से जैसा चाहा उन्हें ईजाद किया। फिर उन्हें अपने इरादे के रास्ते पर चलाया और अपनी मोहब्बत की राह पर उभारा। जिन हुदूद की तरफ़ उन्हें आगे बढ़ाया है उनसे पीछे रहना और जिनसे पीछे रखा है उनसे आगे बढ़ना उनके क़ब्ज़ा व इख़्तेयार से बाहर है। उसी ने हर (ज़ी) रूह के लिये अपने (पैदा कर्दा) रिज़्क़ से मुअय्यन व मालूम रोज़ी मुक़र्रर कर दी है जिसे ज़्यादा दिया है उसे कोई घटाने वाला घटा नहीं सकता और जिसे कम दिया है उसे कोई बढ़ाने वाला बढ़ा नहीं सकता। फ़िर यह के उसी ने उसकी ज़िन्दगी का एक वक़्त मुक़र्रर कर दिया और एक मुअय्यना मुद्दत उसके लिये ठहरा दी। जिस मुद्दत की तरफ़ वह अपनी ज़िन्दगी के दिनों से बढ़ता और अपने ज़मानाए ज़ीस्त के सालों से उसके नज़दीक होता है यहाँ तक के जब ज़िन्दगी की इन्तेहा को पहुँच जाता है और अपनी उम्र का हिसाब पूरा कर लेता है तो अल्लाह उसे अपने सवाब बे पायाँ तक जिसकी तरफ़ उसे बुलाया था या ख़ौफ़नाक अज़ाब की जानिब जिसे बयान कर दिया था क़ब्ज़े रूह के बाद पहुंचा देता है ताके अपने अद्ल की बुनियाद पर बुरों को उनकी बद आमालियों की सज़ा और नेकोकारों को अच्छा बदला दे। उसके नाम पाकीज़ा और उसकी नेमतों का सिलसिला लगातार है। वह जो करता है उसकी पूछगछ उससे नहीं हो सकती और लोगों से बहरहाल बाज़पुर्श होगी।

तमाम तारीफ़ उस अल्लाह के लिये हैं के अगर वह अपने बन्दों को हम्द व शुक्र की मारेफ़त से महरूम रखता उन पैहम अतीयों (अता) पर जो उसने दिये हैं और उन पै दर पै नेमतों पर जो उसने फरावानी से बख़्शी हैं तो वह उसकी नेमतों में तसर्रूफ़ तो करते मगर उसकी हम्द न करते और उसके रिज़्क़ में फ़ारिग़लबाली से बसर तो करते मगर उसका शुक्र न बजा लाते और ऐसे होते तो इन्सानियत की हदों से निकल कर चौपायों की हद में आ जाते, और उस तौसीफ़ के मिस्दाक़ होते जो उसने अपनी मोहकम किताब में की है के वह तो बस चौपायों के मानिन्द हैं बल्कि उनसे भी ज़्यादा राहे रास्त से भटके हुए।"

तमाम तारीफ़ अल्लाह के लिये हैं के उसने अपनी ज़ात को हमें पहचनवाया और हम्द व शुक्र का तरीक़ा समझाया और अपनी परवरदिगारी पर इल्म व इत्तेलाअ के दरवाज़े हमारे लिये खोल दिये और तौहीद में तन्ज़िया व इख़लास की तरफ़ रहनुमाई की और अपने मुआमले में शिर्क व कजरवी से हमें बचाया। ऐसी हम्द जिसके ज़रिये हम उसकी मख़लूक़ात में से हम्दगुज़ारों में ज़िन्दगी बसर करें और उसकी ख़ुशनूदी व बख़्शिश की तरफ़ बढ़ने वालों से सबक़त ले जाएं। ऐसी हम्द जिसकी बदौलत हमारे लिये बरज़क़ की

तारीकियां छट जाएं और जो हमारे लिये क़यामत की राहों को आसान कर दे और हश्र के मजमए आम में हमारी क़द्र व मन्ज़िलत को बलन्द कर दे जिस दिन हर एक को उसके किये काम का सिला मिलेगा और उन पर किसी तरह का ज़ुल्म न होगा। जिस दिन दोस्त किसी दोस्त के कुछ काम न आएगा और न उनकी मदद की जाएगी। ऐसी हम्द हो एक लिखी हुई किताब में है जिसकी मुक़र्रब फ़रिश्ते निगेहदाश्त करते हैं हमारी तरफ़ से बेहिश्त बरीं के बलन्द तरीन दरजात तक बलन्द हो, ऐसी हम्द जिससे हमारी आँखों में ठण्डक आए जबके तमाम आँखें हैरत व दहशत से फटी की फटी रह जाएंगी और हमारे चेहरे रौशन व दरख़्शाँ हों जबके तमाम चेहरे सियाह होंगे। ऐसी हम्द जिसके ज़रिये हम अल्लाह तआला की भड़काई हुई अज़ीयतदेह आग से आज़ादी पाकर उसके जवारे रहमत में आ जाएं। ऐसी हम्द जिसके ज़रिये हम इसके मुक़र्रब फ़रिश्तों के साथ शाना ब शाना बैठते हुए टकराएं और उस मन्ज़िले जावेद व मक़ामे इज़्ज़त व रिफ़अत में जिसे तग़य्युर व ज़वाल नहीं उसके फ़र्सतावा पैग़म्बरों के साथ यकजा हों।

तमाम तारीफ़ उस अल्लाह के लिये है जिसने ख़िलक़त व आफ़रीन्श की तमाम ख़ूबियाँ हमारे लिये मुन्तख़ब कीं और पाक व पाकीज़ा रिज़्क़ का सिलसिला हमारे लिये जारी किया और हमें ग़लबा व तसल्लत देकर तमाम मख़लूक़ात पर बरतरी अता की। चुनांचे तमाम कायनात उसकी क़ुदरत से हमारे ज़ेरे फ़रमान और उसकी क़ूवते सरबलन्दी की बदौलत हमारी इताअत पर आमादा है। तमाम तारीफ़ उस अल्लाह तआला के लिये हैं जिसने अपने सिवा तलब व हाजत का हर दरवाज़ा हमारे लिये बन्द कर दिया तो हम (उस हाजत व एहतियाज के होते हुए) कैसे उसकी हम्द से ओहदा बरआ हो सकते हैं और कब उसका शुक्र अदा कर सकते हैं। नहीं! किसी वक़्त भी उसका शुक्र अदा नहीं हो सकता। तमाम तारीफ़ उस अल्लाह के लिये है जिसने हमारे (जिस्मों में) फैलने वाले आसाब और सिमटने वाले अज़लात तरतीब दिये और ज़िन्दगी की आसाइशों से बहरामन्द किया और कार व कसब के आज़ा हमारे अन्दर वदीअत फ़रमाए और पाक व पाकीज़ा रोज़ी से हमारी परवरिश की और अपने फ़ज़्ल व करम के ज़रिये हमें बेनियाज़ कर दिया और अपने लुत्फ़ व एहसान से हमें (नेमतों का) सरमाया बख़्शा। फिर उसने अपने अवाम्र की पैरवी का हुक्म दिया ताके फ़रमाबरदारी में हमको आज़माए और नवाही के इरतेकाब से मना किया ताके हमारे शुक्र को जांचे मगर हमने उसके हुक्म की राह से इन्हेराफ़ किया और नवाही के मरकब पर सवार हो लिये। फिर भी उसने अज़ाब में जल्दी नहीं की, और सज़ा देने में ताजील से काम नहीं लिया बल्कि अपने करम व रहमत से हमारे साथ नरमी का बरताव किया और हिल्म व राफ़्त से हमारे बाज़ आ जाने का मुन्तज़िर रहा।

तमाम तारीफ़ उस अल्लाह के लिये है जिसने हमें तौबा की राह बताई के जिसे हमने सिर्फ़ उसके फ़ज़्ल व करम की बदौलत हासिल किया है। तो अगर हम उसकी बख़्शिशों में से इस तौबा के सिवा और कोई नेमत शुमार में न लाएं तो यही तौबा हमारे हक़ में इसका उमदा इनआम, बड़ा एहसान और अज़ीम फ़ज़्ल है इसलिये के हमसे पहले लोगों के लिये तौबा के बारे में उसका यह रवय्या न था। उसने तो जिस चीज़ के बरदाश्त करने की हकमें ताक़त नहीं है वह हमसे हटा ली और हमारी ताक़त से बढ़कर हम पर ज़िम्मादारी आएद नहीं की और सिर्फ़ सहल व आसान चीज़ों की हमें तकलीफ़ दी है और हम में से किसी एक के लिये हील व हुज्जत की गुन्जाइश नहीं रहने दी। लेहाज़ा वही तबाह होने वाला है। जो उसकी

मन्शा के ख़िलाफ़ अपनी तबाही का सामान करे और वही ख़ुशनसीब है जो उसकी तरफ़ तवज्जो व रग़बत करे।

अल्लाह के लिये हम्द व सताइश है ह रवह हम्द जो उसके मुक़र्रब फ़रिश्ते बुज़ुर्गतरीन मख़लूक़ात और पसन्दीदा हम्द करने वाले बजा लाते हैं। ऐसी सताइश जो दूसरी सताइशों से बढ़ी चढ़ी हुई हो जिस तरह हमारा परवरदिगार तमाम मख़लूक़ात से बढ़ा हुआ है। फिर उसी के लिये हम्द व सना है उसकी हर हर नेमत के बदले में हो उसने हमें और तमाम गुज़िश्ता व बाक़ीमान्दा बन्दों को बख़्शी है उन तमाम चीज़ों के शुमार के बराबर जिन पर उसका इल्म हावी है और हर नेमत के मुक़ाबले में दो गुनी चौगुनी जो क़यामत के दिन तक दाएमी व अबदी हों। ऐसी हम्द जिसका कोई आख़िरी कुफ़्फार और जिसकी गिनती का कोई शुमार न हो। जिसकी हद व निहायत दस्तरस से बाहर और जिसकी मुद्दत ग़ैर मुख़्तमिम हो। ऐसी हम्द जो उसकी इताअत व बख़्शिष का वसीला, उसकी रज़ामन्दी का सबब, उसकी मग़फ़ेरत का ज़रिया, जन्नत का रास्ता, उसके अज़ाब से पनाह, उसके ग़ज़ब से अमान, उसकी इताअत में मुअय्यन, उसकी मासियत से मानेअ और उसके हुक़ूक़ व वाजेबात की अदायगी में मददगार हो। ऐसी हम्द जिसके ज़रिये उसके ख़ुशनसीब दोस्तों में शामिल होकर ख़ुश नसीब क़रार पाएं और शहीदों के ज़मरह में शुमार हों जो उसके दुश्मनों की तलवारों से शहीद हुए, बेशक वही मालिक मुख़्तार और क़ाबिले सताइश है।

खुलासा

यह कलेमात दुआ का इफ़तेताहिया हैं जो सताइशे इलाही पर मुश्तमिल हैं। हम्द व सताइश अल्लाह तआला के करम व फ़ैज़ान और बख़्शिश व एहसान के एतराफ़ का एक मुज़ाहिरा है और दुआ से क़ब्ल इसके जूद व करम की फ़रावानियों और एहसान फ़रमाइयों से जो तास्सुर दिल व दिमाग़ पर तारी होता है उसका तक़ाज़ा यही है के ज़बान से उसकी हम्द व सताइश के नग़मे उबल पड़ें जिसने एक तरफ़ "वस्अलुल्लाहा मिन फ़ज़्लेही" (अल्लाह से उसके फ़ज़्ल का सवाल करो) कह कर तलब व सवाल का दरवाज़ा खोल दिया और दूसरी तरफ़ "उदऊनी अस्तजिब लकुम" (मुझसे दुआ करो मैं क़ुबूल करूंगा) फ़रमाकर इस्तेजाबते दुआ का ज़िम्मा लिया।

इस तम्हीद में ख़ुदावन्दे आलम की वहदत व यकताई, जलाल व अज़मत, अद्ल व रऊफ़त और दूसरे सिफ़ात पर रोशनी डाली गई है। चुनान्चे सरनामाए दुआ में ख़ल्लाक़े आलम की तीन अहम सिफ़तों की तरफ़ इशारा किया है जिनमें तन्ज़िया व तक़दीस के तमाम जौहर सिमट कर जमा हो गए हैं। पहली सिफ़त यह के वह अव्वल भी है और आख़िर भी, लेकिन ऐसा अव्वल व आख़िर के न उससे पहले कोई था और न उसके बाद कोई होगा। उसे अव्वल व आख़िर कहने के साथ दूसरों से अव्वलीयत व आख़ेरीयत के सल्ब करने के मानी यह हैं के उसकी अव्वलीयत व आख़ेरीयत इज़ाफ़ी नहीं बल्कि हक़ीक़ी है। यानी वह अज़ली व अबदी है जिसका न कोई नुक़ताए आग़ाज़ है और न नुक़ताए इख़्तेताम। न उसकी इब्तिदा का तसव्वुर हो सकता है और न उसकी इन्तेहा का। न यह कहा जा सकता है के वह कब से है, और न यह कहा जा सकता है के वह कब तक है। और जो "कब से" और "कब तक" के हुदूद से बालातर हो

उसके लिये एक लम्हा भी ऐसा फ़र्ज़ नहीं किया जा सकता जिसमें वह नीस्ती से हमकिनार रहा हो और जिसके लिये अदम व नीस्ती को तजवीज़ किया जा सके वह है "वाजेबुल वुजूद" जो मुबदाव अव्वल होने के लेहाज़ से अव्वल और ग़ायते आख़िर होने के लिहाज़ से आख़िर होगा।

दूसरी सिफ़त यह है के वह आंखों से दिखाई नहीं दे सकता, क्योंकर किसी चीज़ के दिखाई देने के लिये ज़रूरी है के वह किसी तरफ़ में वाक़े हो, और जब अल्लाह किसी तरफ़ में वाक़ेअ होगा तो दूसरी तरफ़ें उससे ख़ाली मानना पड़ेंगी। और ऐसा अक़ीदा क्योंकर दुरूस्त तस्लीम किया जा सकता है जिसके नतीजे में बाज़ जेहात को उससे ख़ाली मानना पड़े और दूसरे यह के अगर वह किसी तरफ़ में वाक़ेअ होगा तो उस तरफ़ का मोहताज होगा और चूंके वह ख़ालिक़े एतराफ़ है इसलिये किसी तरफ़ का मोहताज नहीं हो सकता और न उसका ख़ालिक़ न रहेगा और तीसरे यह के जेहत में वही चीज़ वाक़ेअ हो सकती है जिस पर हरकत व सुकून तारी हो सकता है और हरकत व सुकून चूंके मुमकिन की सिफ़ात हैं इसलिये अल्लाह के लिये इन्हें तजवीज़ नहीं किया जा सकता और ज बवह हरकत व सुकून से बरी और अर्ज़ व जौहरे जिस्मानी की सतह से बरतर है तो उसके दिखाई देने का सवाल ही पैदा नहीं होता। मगर उसके बावजूद एक जमाअत उसकी रवियत की क़ायल है। यह जमाअत तीन मुख़्तलिफ़ क़िस्म के अक़ाएद के लोगों पर मुश्तमिल है। इनमें से कुछ का अक़ीदा यह है के उसकी रवियत सिर्फ़ आख़िरत में पैदा होगी। दुनिया में रहते हुए उसे देखा नहीं जा सकता और कुछ अफ़राद का नज़रिया यह है के वह आख़ेरत की तरह दुनिया में भी नज़र आ सकता है अगरचे ऐसा कभी नहीं हुआ, और कुछ लोगों का ख़याल यह है के जिस तरह आख़िरत में उसकी रवियत होगी उसी तरह दुनियां में भी देखा जा चुका है। पहले गिरोह की दलील यह है के रवियत का क़ुरान व हदीस में सराहतन ज़िक्र है जिसके बाद इन्कार का कोई महल बाक़ी नहीं रहता चुनान्चे इरशादे बारी तआला है - "वजूह ..... नाज़ेरत" (उस दिन बहुत से चेहरे तरो ताज़ा व शादाब और अपने परवरदिगार की तरफ़ निगरान होंगे) इससे साफ़ ज़ाहिर है के वह क़यामत में नज़र आएगा और दुनिया में इसलिये नज़र नहीं आ सकता के यहाँ हमारे इदराकात व क़वा कमज़ोर हैं जो तजल्ली-ए-इलाही की ताब नहीं रखते, और आख़ेरत में हमारे हिस व शऊर की क़ूवतें तेज़ हो जाएंगी जैसा के इरशादे इलाही है "फकशफ़ना अन्क अज़ाअक फ़ बसरक अलयौम हदीद" (हमने तुम्हारे सामने से परदे हटा दिये अब तुम्हारी आंखें तेज़ हो गईं) लेहाज़ा वहाँ पर रवीयत से कोई अम्र मानेअ नहीं हो सकता।

दूसरे गिरोह की दलील यह है के अगर दुनिया में इसकी रवीयत मुमकिन न होती तो हज़रत मूसा (अ0) "रब्बे .....एलैक" (ऐ परवरदिगार! मुझे अपनी झलक दिखा ताके मैं तुझे देखूँ) कह कर अनहोनी और नामुमकिन बात की ख़्वाहिश न करते, और अल्लाह तआला ने भी उसे इस्तेक़रारे जबल पर मौक़ूफ़ करके इमकाने रवीयत की तरफ़ इशारा कर दिया। इस तरह अगर रवीयत मुमकिन न होती, तो उसे पहाड़ के ठहराव पर के जो एक अम्रे मुमकिन है मौक़ूफ़ न करता। चुनांचे इरशादे इलाही है "वलाकिन उनज़ुर एलल जबले फान इसतक़र मकानह फ़सौफ तरानी। (इस पहाड़ की तरफ़ देखो, अगर यह अपनी जगह पर ठहरा रहे तो फिर मुझे भी देख लोगे) और अगर इस सिलसिले में "लन तरानी" (तुम मुझे क़तअन नहीं देख सकते) फ़रमाया तो उससे सिर्फ़ दुनिया में वक़ू रवीयत की नफ़ी मुराद है न इमकान रवीयत की और न उससे रवीयत आख़ेरत की नफ़ी मक़सूद है। क्योंके जब यह कहा जाए के ऐसा कभी नहीं होगा, तो अरफ़

में उसके मानी यही होते हैं के दुनिया में ऐसा कभी नहीं होगा, यह मक़सद नहीं होता है के आख़ेरत में भी ऐसा नहीं होगा। चुनांचे क़ुराने मजीद में यहूद के मुताल्लिक़ इरशाद है के लईंयतमन्नौहो (वह मौत की कभी तमन्ना नहीं करेंगे) तो यह तमन्ना की नफ़ी दुनिया के लिये है के वह दुनिया में रहते हुए मौत के ख़्वाहिशमन्द कभी नहीं होंगे और आख़ेरत में तो वह अज़ाबे जहन्नम से छुटकारा हासिल करने के लिये बहरहाल मौत की तमन्ना व आरज़ू करेंगे। तो जिस तरह यहाँ पर नफ़ी का ताल्लुक़ सिर्फ़ दुनिया से है उसी तरह वहां भी नफ़ी का ताल्लुक़ सिर्फ़ दुनिया से है न आख़ेरत से।
तीसरे गिरोह की दलील है के जब बयाने साबिक़ से दुनिया में इसकी रवीयत का इमकान साबित हो गया तो उसके वक़ोअ के लिये हुस्ने बसरी और अहमद बिन जम्बल वग़ैरह का यह क़ौल काफ़ी है के पैग़म्बर सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही वसल्लम ने लैलतल इसरा में उसे देखा।

जब इन दलाएल का जाएज़ा लिया जाता है तो वह इन्तेहाई कमज़ोर और असबाते मुद्दआ से क़ासिर नज़र आते हैं। चुनान्चे पहले गिरोह का यह दावा के क़ुरान व हदीस में रवीयत के शवाहिद बकसरत हैं एक ग़लत और बेबुनियाद दावा है और क़ुरान व हदीस से क़तअन इसका असबात नहीं होता बल्कि क़ुरआन के वाज़ेह तसरीहात उसके ख़िलाफ़ हैं और क़ुरानी तसरीहात के ख़िलाफ़ अगर कोई हदीस होगी भी तो वह मौज़ूअ व मतरूह क़रार पाएगी। चुनान्चे क़ुराने मजीद में नफ़ी रवीयत के सिलसिले में इरशादे इलाही है के ला क़ुदरकह..... वहोवल लतीफ़ल ख़बीर। (आंखें उसे देख नहीं सकतीं और वह आँखों को देख रहा है, और वह हर छोटी से छोटी चीज़ से आगाह और बाख़बर है) और जिस आयत को असाबते रवीयत के सिलसिले में पेश किया गया है, इसमें लफ़्ज़ नाज़ेरत से रवीयत पर इस्तेदलाल सही नहीं है क्योंके अहले लुग़त ने नज़र के मानी इन्तेज़ार, ग़ौर-व फ़िक्र, मोहलत, शफ़क़त और इबरत अन्दोज़ी के भी किये हैं और जब एक लफ़्ज़ में और मानी का भी एहतेमाल हो तो उसे दलील बनाकर पेश नहीं किया जा सकता।

चुनांचे कुछ मुफ़स्सेरीन ने इस मक़ाम पर नज़र के मानी इन्तेज़ार के लिये हैं और इस मानी के लेहाज़ से आयत का मतलब यह है के वह इस दिन अल्लाह की नेमतों के मुन्तज़िर होंगे और इस मानी की शाहिद यह आयत है - फ़नाज़ेरत .....मुरसेलून (वह मुन्तज़िर थी के क़ासिद क्या जवाब लेकर पलटते हैं और कुछ मुफ़स्सेरीन ने नज़र के मानी देखने के लिये हैं और इस सूरत में लफ़्ज़ सवाब को यहाँ महज़ूफ़ माना है और आयत के मानी यह हैं के वह अपने परवरदिगार के सवाब की जानिब निगराँ होंगे। जिस तरह इरशादे इलाही -वजाअअ रब्बेक, (तुम्हारा परवरदिगार आया) में लफ़्ज़ अम्र महज़ूफ़ माना गया है और मानी यह किये गए हैं के तुम्हारे परवरदिगार का हुक्म आया, और फ़िर यह कहां ज़रूरी है के जहाँ नज़र सादिक़ आये वहां रवीयत भी सादिक़ आये। चुनांचे अरब क ामक़ौला है के नज़रत एललहलाल फ़लम अराहो, (मैंने चांद की तरफ़ नज़र की मगर देख न सका) यहाँ नज़र साबित है मगर रवीयत साबित नहीं है। अब रहा यह के वह दुनिया में इस लिये नज़र नहीं आ सकता के यहाँ इन्सानी इदराकात व क़वा ज़ईफ़ हैं और आख़ेरत में यह और इदराकात क़वी हो जायेंगे। तो यह दुनिया व आख़ेरत की तफ़रीक़ इस बिना पर तो सही हो सकती है अगर उसकी ज़ात दिखाई दिये जाने के क़ाबिल हो और हमारी निगाहें अपने अजज़ों क़ुसूर की बिना पर क़ासिर हैं। लेकिन हब उसकी ज़ात का तक़ाज़ा ही यह है

के जाने के वह दिखाई न दे तो महल व मुक़ाम के बदलने से नाक़ाबिले रवीयत ज़ात क़ाबिले रवीयत नहीं क़रार पा सकती। और इस सिलसिले में जो आयत पेश की गयी है उसमें तो यह नहीं है के इदराकात व हवास के तेज़ हो जाने से ख़ुदा को भी देखा जा सकेगा बल्कि आयत के मानी तो यह हैं के उस दिन परदे हटा दिये जाएंगे और आँखें तेज़ हो जाएंगी जिसका वाज़ेह मतलब यह है के वहां पर तमाम शुबहात हट जाएंगे और आँखों पर पड़े हुए ग़फ़लत के परदे उठ जाएंगे, यह मानी नही ंके वह अल्लाह को भी देखने लगेंगे, और अगर ऐसा ही है तो यह ग़फ़लत के परदे तो काफ़िरों की आँखों से उठेंगे लेहाज़ा उन्हीं को नज़र आना चाहिये।

दूसरे गिरोह की दलील का जवाब यह है के हज़रत मूसा अ0 ने रवीयते बारी की ख़्वाहिश इस लिये नहीं की थी के वह उसकी रवीयत को मुमकिन समझते थे और उन्हें उसके नाक़ाबिले रवीयत होने का इल्म न था। यक़ीनन वह जानते थे के वह इदराके हवास व मुशाहिदए बशरी से बदन्दतर है। तो इस सवाल की नौबत इसलिये आई के बनी इसराइल ने कहा के या मूसा लन नौमन लका.....जहरतन (ऐ मूसा अ0! हम उस वक़्त तक ईमान नहीं लाएंगे जब तक ख़ुदा को ज़ाहिर ब ज़ाहिर न देख लेंगे) तो मूसा अलैहिस्सलाम ने चाहा के उन पर उनकी बे राहरवी साबित कर दें और यह वाज़ेह कर दे ंके वह कोई दिखाई देने वाली चीज़ नहीं है। इसलिये अल्लाह के सामने उनका सवाल पेश किया ताके वह अपने सवाल का नतीजा देख लें और इस ग़लत ख़्याल से बाज़ आयें। चुनांचे ख़ुदा वन्द आलम का इरशाद है के फ़क़द साअलू ..... जहरतन (यह लोग तो मूसा अ0 से इससे भी बड़ा सवाल कर चुके हैं और वह यह के मूसा से कहने लगे के हमें ख़ुदा को ज़ाहिर ब ज़ाहिर दिखा दीजिये) जब मूसा अ0 ने उनके कहने पर सवाल किया तो इस मौक़े पर क़ुदरत का यह इरशाद के "तुम पहाड़ की तरफ़ देखो अगर यह अपनी जगह पर बरक़रार रहे तो मुझे देख लोगे" इमकाने रवीयत का पता नहीं देता। इसलिये के मौक़ूफ़ अलिया सिर्फ़ पहाड़ का ठहराव नहीं था क्योंके वह तो उस वक़्त भी ठहरा हुआ था जब रवीयत को उस पर मोअल्लक़ किया जा रहा था बल्के तजल्ली के वक़्त उसका ठहराव मक़सूद था, और जब तक इस मौक़े के लिये उसके ठहराव का इमकान साबित न हो इस ठहराव को इमकाने रवीयत की दलील नहीं क़रार दिया जा सकता। हालांके इस सअत पर तो यह हुआ के "जअलहू दक्कन ..... साअक़न" (तजल्ली ने इस पहाड़ को चकनाचूर कर दिया और मूसा बेहोश होकर गिर पड़े) और बनी इसराइल पर उनके बे महल सवाल की वजह से बिजली गिरी। जैसा के इरशादे इलाही है - फ़ा ख़ज़त..... बे ज़ुल्मेहिम (उनकी शर पसन्दी की वजह से बिजली ने उन्हें जकड़ लिया) अगर ख़ुदा वन्दे आलम की रवीयत मुमकिन होती तो एक मुमकिन अलवक़ो चीज़ से ईमान को वाबस्ता करना ऐसा जुर्म न था के उन्हें साएक़ा के अज़ाब में जकड़ लिया जाए और उनकी ख़्वाहिश को ज़ुल्म से ताबीर किया जाए। आख़िर हज़रत इबराहीम अ0 ने भी तो अपने इतमीनान को मुर्दों को ज़िन्दा करने से वाबस्ता किया था। चुनान्चे उन्होंने कहा के "रब्बे अरनी कैफ़ा हय्यिल मौता" (ऐ मेरे परवरदिगार मुझे दिखा के तू क्योंकर मुर्दों को ज़िन्दा करता है) इसके जवाब में क़ुदरत ने फ़रमाया -अवलम तौमन (क्या तुम ईमान नहीं लाए) हज़रत इबराहीम अ0 ने अर्ज़ किया -बला वलाकिन लैतमन क क़ल्बी (हाँ ईमान तो लाया! लेकिन चाहता हूँ के दिल मुतमइन हो जाए) अगर हज़रत इबराहीम अ0 अपने इतमीनान को मुर्दों के ज़िन्दा होने से वाबस्ता कर सकते हैं तो उन लोगों ने अगर अपने ईमान को रवीयते बारी पर मोअल्लक़ किया तो जुर्म ही कौन सा क्या जिस चीज़

पर इन्हें लरज़ा बरअन्दाम कर देने वाली सज़ा दी जाए। और अगर यह कहा जाये के सज़ा इस बिना पर न थी के इन्होंने रवीयते बारी का मुतालेबा किया था, उनकी साबेक़ा ज़िद, हठधर्मी और कट हुज्जती के पेशे नज़र थी, मगर यह देखते हुए के वह मुतालेबए क़ूवह करें जो किया जा सकता है और मुमकिनअलवक़ो है और इस ज़रिये से अपने ईमान की तकमील चाहें मगर उनकी किसी साबेक़ा ज़िद और सरकशी को सामने रखते हुए उन्हें ऐसी सज़ा दी जाए जो उन्हें नीस्त व नाबूद कर दे, अक़्ल में आने वाली बात नहीं है। और अगर यह कहा जाये के रवीयत के सिलसिले में इनकी ज़िद पर इन्हें सज़ा दी गई थी तो इसमें ज़िद की क्या बात थी अगर उन्होंने मूसा अ0 के क़ौल को मुशाहिदे के मुताबिक़ करके देखना चाहा, और अगर रवीयत मुर्दों को ज़िन्दा करने की तरह मुमकिन थी तो इसमें मुज़ाएक़ा ही किया था के उनकी ख़्वाहिश को पूरा कर दिया जाता और जिस तरह हज़रत इबराहीम अ0 के हाथों पर मुर्दों को ज़िन्दा करके उनकी ख़लिश को हटा दिया था, इसी तरह यहाँ भी रवीयत से इनके ईमान की सूरत पैदा कर दी होती, और अगर मसलहत इसकी मुक़तज़ी न थी तो हज़रत मूसा अ0 के ज़रिये उन्हें समझा दिया जाता के दुनिया में न सही आख़ेरत में उसे देख लेना। मगर उनका मुतालेबा पूरा करने के बजाये उन्हें मोरिदे एताब ठहराया जाता है और उनकी ख़्वाहिश को ज़ुल्म व हदशिकनी से ताबीर किया जाता है और आख़िर उन्हें ख़र्मने हस्ती को जलाने वाली बिजलियों में जकड़ लिया जाता है, यह सिर्फ़ इस लिये के इन्होंने एक ऐसी ख़्वाहिश का इज़हार किया जिससे ख़ुदा के दामने तन्ज़िया पर धब्बा आता था। और यह एक ऐसी अनहोनी चीज़ का मुतालेबा था जिस पर उन्हें सज़ा देना ज़रूरी समझा गया ताके दूसरों को इबरत हासिल हो, और बनी इसराईल के अन्जाम को देख कर रवीयते बारी का तसव्वुर न करें, चुनान्चे अल्लाह सुब्हानहू ने अपनी रवीयत को पहाड़ पर मोअल्लक़ करने से पहले वाज़ेह अलफ़ाज़ में फ़रमाया के - लन तरानी (ऐ मूसा अ0! तुम मुझे हरगिज़ नहीं देख सकते) न दुनिया में और न आख़ेरत में, क्योंके लफ्ज़ लन नफ़ी ताबीद के लिये आता है और इस नफ़ी ताबीद को दवामे अरफ़ी पर महमूल करना ग़लत है। यह दवामे उर्फ़ी वहां पर तो सही हो सकता है जहां मुतकल्लिम व मख़ातब दोनों फ़ानी और मारिज़े ज़वाल में हों और जहां मुतकल्लिम अबदी सरमदी और दाएमी हो वहां नफ़ी के हुदूद भी वहाँ तक फैले हुए होंगे, जहाँ तक इस ज़ाते सरमदी का दामने बक़ा फैला हुआ है और चूंके वह हमेशा हमेशा रहने वाला है इसलिये इसकी तरफ़ से जो नफ़ी ताबीर वारिद होगी वह दुनिया की मुद्दते बक़ा में महदूद नहीं की जा सकती और जिस आयत की नफ़ी को दवामे अरफ़ी के मानी में पेश किया गया है उससे इस्तेशहाद इस बिना पर सही नही के वह उन लोगों के मुताल्लिक़ है जो फ़ानी व महदूद हैं। लेहाज़ा इस मुक़ाम की नफ़ी का इस मुक़ाम की नफ़ी पर क़यास नहीं किया जा सकता और अगर यह आयत -लॅय्यतमन्नौहो (वह मौत की हरगिज़ तमन्ना नहीं करेंगे) मैं भी ताबीरे हक़ीक़ी के मानी मुराद लिये जाएं तो लिये जा सकते हैं, क्योंके आख़ेरत में वह मौत की तमन्ना करेंगे तो वह दर हक़ीक़त मौत की तमन्ना न होगी बल्कि अस्ल तमन्ना अज़ाब से निजात हासिल करने की होगी जिसे तलबे मौत के परदे में तलब करेंगे और यह मौत की तलब न होगी बल्कि राहत व आसाइश और अज़ाब से छुटकारे की तलब होगी और जबके अज़ाब के बजाये उन्हें राहत व सुकून नसीब हो तो वह यक़ीनन ज़िन्दगी के ख़्वाहाँ होंगे और फिर जब असली मानी ताबीर हक़ीक़ी के हैं तो इससे ताबीर अरफ़ी मुराद लेने के लिये किसी क़रीने की ज़रूरत है और यहाँ कोई क़रीना व दलील मौजूद नहीं है के हक़ीक़ी मानी से उदूल करना सही हो सके।

तीसरे गिरोह की दलील का जवाब यह है के अगर कुछ सहाबा व ताबेईन का क़ौल यह है के पैग़म्बर स0 इकराम ने लैलतल इसरा में अपने रब को देखा तो सहाबा व ताबेईन की एक जमाअत इसकी भी तो क़ायल है के ऐसा नहीं हुआ। चुनांचे हज़रत आइशा और सहाबा की एक बड़ी जमाअत का यही मसलक है, लेहाज़ा चन्द अफ़राद की ज़ाती राय को कैसे सनद समझा जा सकता है जबके इसके मुक़ाबले में वैसे ही अफ़राद इसके ख़िलाफ़ नज़रिया रखते हैं, चुनांचे जनाबे आइशा का क़ौल है-

जो शख़्स तुमसे यह बयान करे के मोहम्मद सल्लल्लाहो अलैह व आलेही वसल्लम ने अपने रब को देखा तो उसने झूठ कहा और अल्लाह का इरशाद तो यह है के उसे निगाहें देख नहीं सकतीं अलबत्ता वह निगाहों को देख रहा है और हर छोटी से छोटी चीज़ से आगाह व ख़बरदार है। (सही बुख़ारी जि0-4 सफ़ा 168)

तीसरी सिफ़त यह है के उक़ूले इन्सानी उसके औसाफ़ की नक़ाब कुशाई से क़ासिर हैं क्योंके ज़बान उन्हीं मानी व मफ़ाहिम की तर्जुमानी कर सकती है जो अक़्ल व फ़हम में समा सकते हैं और जिनके समझने से अक़्लें आजिज़ हों वह अल्फ़ाज़ की सूरत में ज़बान से अदा भी नहीं हो सकते और ख़ुदा के औसाफ़ का इदराक इसलिये नामुमकिन है के इसकी ज़ात का इदराक नामुमकिन है और जब तक इसकी ज़ात का इदराक न हो उसके नफ़्सुल अम्री औसाफ़ को भी नहीं समझा जा सकता और ज़ात का इदराक इसलिये नहीं हो सकता के इन्सानी इदराकात महदूद होने की वजह से ग़ैर महदूद ज़ात का अहाता नहीं कर सकते। लेहाज़ा इस सिलसिले में जितना भी ग़ौर व ख़ौज़ किया जाए उसकी ज़ात और उसके नफ़्सुल अम्री औसाफ़ अक़्ल व फ़हम के इदराक से बालातर रहेंगे।